

NCERT Solutions for Class 12 History Chapter 8 किसान, जमींदार और राज्य

अभ्यास-प्रश्न

उत्तर दीजिए (लगभग 100-150 शब्दों में)

प्रश्न 1. कृषि इतिहास लिखने के लिए आइन को स्रोत के रूप में इस्तेमाल करने में कौन-सी समस्याएँ हैं? इतिहासकार इन समस्याओं से कैसे निपटते हैं?

उत्तर: आइन में कृषि इतिहास के सन्दर्भ में संख्यात्मक आँकड़ों की दृष्टि से विषमताएँ पाई गई हैं। सभी सूबों से आँकड़े एक ही शकल में नहीं एकत्रित किए गए। मसलन, जहाँ कई सूबों के लिए जमींदारों की जाति के मुतलिक विस्तृत सूचनाएँ संकलित की गई, वहीं बंगाल और उड़ीसा के लिए ऐसी सूचनाएँ मौजूद नहीं हैं। इसी तरह, जहाँ सूबों से लिए गए राजकोषीय आँकड़े बड़ी तफ़सील से दिए गए हैं, वहीं उन्हीं इलाकों से कीमतों और मज़दूरी जैसे इतने ही महत्वपूर्ण मापदंड इतने अच्छे से दर्ज नहीं किए गए हैं।

कीमतों और मज़दूरी की दरों की जो विस्तृत सूची आइन में दी गई है, वह साम्राज्य की राजधानी आगरा या उसके इर्द-गिर्द के इलाकों से ली गई है। जाहिर है कि देश के बाकी हिस्सों के लिए इन आँकड़ों की प्रासंगिकता सीमित है। इतिहासकार आमतौर पर यह मानते हैं कि इस तरह की समस्याएँ तब आती हैं जब व्यापक स्तर पर इतिहास लिखा जाता है। आँकड़ों के संग्रह की अधिकता से छोटी-मोटी चूक होना आम बात है और इससे किताबों के आँकड़ों की सच्चाई को कम करके नहीं आँका जा सकता।

प्रश्न 2. सोलहवीं-सत्रहवीं सदी में कृषि उत्पादन को किस हद तक महज़ गुज़ारे के लिए खेती कह सकते हैं? अपने उत्तर के कारण स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: 16वीं-17वीं सदी में दैनिक आहार की खेती पर ज्यादा जोर दिया जाता था, लेकिन इसका यह मतलब नहीं था कि उस काल में खेती केवल गुजारा करने के लिए की जाती थी। तत्कालीन स्रोतों में जिन्स-ए-कामिल अर्थात् सर्वोत्तम फ़सलें जैसे लफ़ज़ मिलते हैं। मुगल राज्य किसानों को ऐसी फ़सलों को खेती करने के लिए बढ़ावा देता था, क्योंकि इनसे राज्य को ज्यादा कर मिलता था। कपास और गन्ने जैसी फ़सलें बेहतरीन जिन्स-ए-कामिल थीं। चीनी, तिलहन और दलहन भी नकदी फ़सलों के अंतर्गत आती थीं। इससे पता चलता है कि एक औसत किसान की ज़मीन पर किस तरह पेट भरने के लिए होने वाले उत्पादन और व्यापार के लिए किए जाने वाले उत्पादन एक-दूसरे से जुड़े थे।

प्रश्न 3. कृषि उत्पादन में महिलाओं की भूमिका का विवरण दीजिए

अथवा

16 वीं-17वीं शताब्दियों के दौरान मुगल साम्राज्य के अंतर्गत कृषि समाज में महिलाओं की भूमिका स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: कृषि में महिलाओं की भूमिका अत्यन्त प्राचीनकाल से महत्वपूर्ण रही है तथा यही स्थिति मुगलकाल में भी थी। मालकाल में महिलाएँ भी पुरुषों के समान कृषि-कार्यों में सहभागिता करती थीं। एक ओर पुरुष खेत जोतते थे तथा हल चलाते थे; कहीं महिलाएँ बुआई, कटाई तथा निराई जैसे महत्वपूर्ण कार्य करती थीं। इसके अतिरिक्त महिलाएँ पकी हुई फसलों से दाना निकालने का कार्य भी करती थीं, किन्तु इस समय महिलाओं की जैव-वैज्ञानिक क्रियाओं को लेकर लोगों के मन में अनेक पूर्वाग्रह थाभ जैसे-पश्चिमी भारत, विशेषकर राजस्थान में रजस्वला महिला को हल तथा कुम्हार का चाक छूने की इजाजत नहीं थी, इसी प्रकार बपल में अपने मासिक धर्म के समय महिलाएँ पान के बागान में नहीं जा सकती थीं। इस समय महिलाएँ कृषि के अतिरिक्त अध्यापक

गतिविधियों में भी संलग्न रहती थीं, जैसे सूत कातना, बर्तन बनाने के लिये मिट्टी को साफ करना और गूथना, कपड़ों चाकलाई.आदि। वस्तुतः ये सभी कार्य महिलाओं के श्रम पर ही आश्रित थे। किसी वस्तु का जितना वाणिज्यीकरण होता था, उसके उत्पत्ति के लिये महिलाओं के श्रम की उतनी ही अधिक माँग होती थी। संक्षेप में; मुगलकाल में कृषि तथा कृषि से सम्बन्धित जगभग सभी कार्यों में निओं की भागीदारी परम आवश्यक थी।

प्रश्न 4: विचाराधीन काल में मौद्रिक कारोबार की अहमियत की विवेचना उदाहरण देकर कीजिए ।

उत्तर: 16वीं और 17वीं शताब्दियों में कृषि अर्थव्यवस्था में मौद्रिकीकरण का उल्लेखनीय विस्तार हुआ और वस्तु विनिमय पर आधारित अर्थव्यवस्था का स्थान मुद्रा अर्थव्यवस्था ने ले लिया। मुगल सम्राटों की वित्तीय एवं आर्थिक नीतियों के कारण साम्राज्य में मुद्रा का संचरण बढ़ने लगा। शाही टकसाल में खुली सिक्काढलाई की पद्धति ने मुद्रा संचरण को और अधिक विस्तृत बनाया। शीघ्र ही मौद्रिक कारोबार के महत्त्व में वृद्धि होने लगी। मुगल सम्राटों की राजस्व नीति ने मुद्रा अर्थव्यवस्था की संवृद्धि में विशेष रूप से योगदान दिया। 16वीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में ही राज्य द्वारा किसानों को यह छूट दे दी गई कि वे भू-राजस्व का भुगतान नकद अथवा जिन्स के रूप में कर सकते थे। इस सुविधा के परिणामस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था में मौद्रिक कारोबार के महत्त्व में वृद्धि होने लगी। यह सत्य है कि इस काल में ग्रामों में दस्तकार विशाल संख्या में रहते थे और उन्हें उनकी सेवाओं के बदले प्रायः जिन्स के रूप में अर्थात् उत्पादन के रूप में भुगतान किया जाता था।

किन्तु हमें इस काल में सेवाओं के बदले नकद भुगतान के उदाहरण भी उपलब्ध होते हैं। उदाहरण के लिए, 18वीं शताब्दी के स्रोतों में बंगाल में 'जजमानी' नामक एक व्यवस्था का उल्लेख मिलता है, इसके अंतर्गत बंगाल में

जमींदार लोहारों, बढ़ड़ियों और सुनारों तक को उनकी सेवाओं के बदले रोज़ का भत्ता तथा रखने के लिए नकदी देते थे। विचाराधीन काल में ग्रामों और शहरों के मध्य होने वाले व्यापार के परिणामस्वरूप ग्रामों के कारोबार में भी मौद्रिकीकरण का महत्त्व बढ़ने लगा था। ग्राम समुदाय महाजनों और बनजारों के माध्यम से कस्बों और शहरों को अनाज भेजते थे। इस प्रकार ग्रावीं शताब्दी के सभी भारतीय ग्रामों में सराफ़ों का उल्लेख मिलता है। ज़मींदारियों के विस्तार ने भी मौद्रिकीकरण के विकास को बढ़ावा दिया। जमींदारों ने किसानों को कृषि योग्य भूमि के विस्तार के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने किसानों को कृषि संबंधी उपकरण तथा उधार देकर वहाँ बसने में सहायता प्रदान की। जमींदारियों के क्रय-विक्रय ने ग्रामों में मौद्रिकीकरण की प्रक्रिया को तीव्र बनाया। ज़मींदार किसानों से राजस्व की माँग नकद रूप में करते थे। वे अपने स्वामित्व की जमीनों की फ़सल भी बेचते थे। समकालीन स्रोतों से पता चलता है कि ज़मींदार प्रायः अपने बाजारों अथवा मंडियों की स्थापना कर लेते थे।

किसान यहाँ अपनी फ़सल बेचकर नकदी प्राप्त कर लेते थे और जमींदार को कर का भुगतान भी कर देते थे। कारोबार में मौद्रिकीकरण का महत्त्व बढ़ने के परिणामस्वरूप किसान उन्हीं फ़सलों के उत्पादन पर बल देने लगे, जिनकी बाजार में पर्याप्त माँग थी और जिनकी अच्छी कीमत मिलती थी। व्यापार के विस्तार ने भी मौद्रिकीकरण को प्रोत्साहन दिया। भारत से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का भुगतान करने के लिए भारी मात्रा में चाँदी भारत आने लगी। उल्लेखनीय है कि भारत में चाँदी के प्राकृतिक संसाधन नहीं थे। इस प्रकार बाहर से विशाल मात्रा में चाँदी आना भारत के लिए वरदान सिद्ध हुआ। इसके परिणामस्वरूप 16वीं से 18वीं शताब्दी के काल में भारत में धातु मुद्रा, विशेष रूप से चाँदी के रुपयों की उपलब्धि में स्थिरता बनी रही। इससे वहाँ एक ओर अर्थव्यवस्था में मुद्रा-संचरण को बढ़ावा मिला तथा सिक्की ढलाई के कार्य का विस्तार हुआ वहीं दूसरी ओर साम्राज्य को अधिकाधिक राजस्व नकद रूप में प्राप्त होने लगा।

प्रश्न 5. उन सबूतों की जाँच कीजिए जो ये सुझाते हैं कि मुगल राजकोषीय व्यवस्था के लिए भूराजस्व बहुत महत्वपूर्ण था।

उत्तर: 'वित्त' साम्राज्य रूपी शरीर का मेरुदंड होता है। अतः लगभग सभी मुगल सम्राट साम्राज्य को सुदृढ़ वित्तीय आधार प्रदान करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। जजिया, जकात, खम्स, खिराज, व्यापार, टकसाल, अधीन राजाओं और मनसबदारों से समय-समय पर प्राप्त होने वाले उपहार, उत्तराधिकारीविहीन सम्पत्ति, व्यापारिक एकाधिकार, राज्य द्वारा चलाए जाने वाले उद्योग, विभिन्न प्रकार की चुगियाँ आदि राज्य की आय के अनेक साधन थे। इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान भू-राजस्व का था। भू-राजस्व ही साम्राज्य की आर्थिक बुनियाद का आधार था। अतः कृषि उत्पादन पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए तथा तीव्र गति से विस्तृत होते हुए साम्राज्य के सभी क्षेत्रों में राजस्व के आकलन एवं वसूली के लिए एक प्रशासनिक तंत्र का निर्माण करना नितांत आवश्यक हो गया।

दीवान अथवा वित्त मंत्री, जो संपूर्ण राज्य की वित्तीय व्यवस्था की देख-रेख के लिए उत्तरदायी था, इस तंत्र में सम्मिलित था। वित्त के साथ-साथ राजस्व विभाग भी उसी के नियंत्रण में था। इस प्रकार आय-व्यय का हिसाब रखने वाले अधिकारियों और राजस्व अधिकारियों ने कृषि जगत में प्रवेश किया और शीघ्र ही वे कृषि-संबंधों के निर्धारण में एक निर्णायक शक्ति बन गए। लोगों पर कर का भार निर्धारित करने में पहले मुगल राज्य ने जमीन और उस पर होने वाले उत्पादन के विषय में विशेष सूचनाएँ इकट्ठा करने का प्रयास किया। कर निर्धारण और वास्तविक वसूली भू-राजस्व के प्रबंध के दो महत्वपूर्ण चरण थे। अकबर प्रथम मुगल सम्राट था, जिसने भू-राजस्व व्यवस्था को सुचारू रूप से व्यवस्थित किया और मध्ययुग की सर्वोत्तम भू-राजस्व प्रणाली का निर्माण किया।

उसने अपने सुयोग्य वित्तमंत्री राजा टोडरमल के सहयोग से भू-राजस्व व्यवस्था के क्षेत्र में जिस प्रशंसनीय प्रणाली को स्थापित किया, वह संपूर्ण मुगलकाल में भू-राजस्व व्यवस्था का प्रमुख आधार बनी रही। इस प्रणाली को इतिहास में दहसाला प्रबंध, आइन-ए-दहसाला, जब्ती-प्रणाली एवं राजा टोडरमल की भू-राजस्व पद्धति आदि नामों से जाना जाता है। अकबर के शासनकाल में भू-राजस्व की दो अन्य प्रणालियाँ भी प्रचलित थीं। ये थीं- 1. गल्लाबखशी प्रणाली 2. नस्क अथवा कनकूत प्रणाली। दहसाला व्यवस्था 1580 ई० में साम्राज्य के आठ महत्वपूर्ण प्रांतों-दिल्ली, आगरा, अवध, इलाहाबाद, मालवा, अजमेर, लाहौर और मुल्तान में प्रचलित की गई

- दहसाला व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ 1. भूमि की पैमाइश - इस प्रणाली के अंतर्गत ऊपर लिखे गए आठों प्रांतों की समस्त कृषि योग्य भूमि की पैमाइश 41-अंगुल | वे इलाही गज से करवाई गई। 2. भूमि का वर्गीकरण - पैमाइश के बाद काश्त की निरंतरता के आधार पर समस्त भूमि को पोलज, परौती, चचर और बंजर इन चार भागों में विभक्त कर दिया गया। पोलज सर्वाधिक उपजाऊ भूमि थी जिस पर सदैव कारत होती थी। परौती अपेक्षाकृत कम उपजाऊ थी। दो-तीन वर्ष तक निरंतर खेती करने के उपरांत इसे एकाध वर्ष के लिए परती (खाली) छोड़ दिया जाता था। छज्छर भूमि को एक फ़सल के बाद पुनः उर्वरा-शक्ति प्राप्त करने के लिए तीन-चार वर्ष के लिए खाली छोड़ना पड़ता था।

बंजर सर्वाधिक निम्नकोटि की भूमि थी। राज्य का भाग निश्चित करना । जैसा कि पहले बताया जा चुका है, कर निर्धारण और वास्तविक वसूली मुगल भू-राजस्व प्रबन्ध के दो महत्वपूर्ण चरण थे। वास्तविक वसूली अर्थात् वास्तव में वसूल की जाने वाली रकम हासिल के नाम से जानी जाती थी। राज्य राजस्व निर्धारण के समय अपना भाग अधिक-से-अधिक रखने का प्रयत्न करता था, किंतु स्थानीय परिस्थितियों के कारण कभी-कभी वास्तव में इतनी वसूली नहीं हो पाती थी, इसलिए जमा और हासिल में काफी अंतर हो जाता था। 'पोलज'

और 'परौती' श्रेणियों की भूमि से राज्य उपज का 1/3 भाग भू-राजस्व के रूप में लेता था। नकद मूल्य निश्चित करना ।

कर को नकद दर (दस्तूर) में परिवर्तित करने के लिए भिन्न-भिन्न हलकों की पिछले दस वर्षों की औसत दरों के आधार पर दर-सूचियाँ (रे) तैयार की जाती थीं और उन सूचियों के आधार पर राज्य का भाग अनाज़ से नकद धनराशि के रूप में परिवर्तित कर लिया जाता था। राज्य नकद रूप में भू-राजस्व प्राप्त करना अधिक अच्छा समझता था। गुल्ला बखशी प्रणाली सिंध, कश्मीर, काबुल, कंधार और गुजरात में भू-राजस्व की परम्परागत प्रणाली ही प्रचलित रही, जिसे गुल्ला बखशी अथवा बटाई के नाम से जाना जाता है।

नस्क अथवा कनकृत प्रणाली : मुगल साम्राज्य के कुछ भागों; जैसे- बंगाल, उड़ीसा और बरार में नस्क अथवा कनकृत प्रणाली का प्रचलन था। भूमि-कर वर्ष में दो बार (पहली बार रबी की फ़सल और दूसरी बार खरीफ़ की फ़सल पकने पर) सीधे किसानों से वसूल किया जाता था। सरकार की ओर से किसान को 'पट्टा' नामक एक पत्र दिया जाता था और किसान 'कबूलियतनामा' पर हस्ताक्षर करके सरकार को देता था। भू-राजस्व प्रबंध के संबंध में उठाए गए इन कदमों से यह भली-भाँति स्पष्ट हो जाता है कि मुगल राजकोषीय व्यवस्था के लिए भू-राजस्व अत्यधिक महत्वपूर्ण था।

निम्नलिखित पर एक लघु निबंध लिखिए (लगभग 250-300 शब्दों में)

प्रश्न 6 . आपके मुताबिक कृषि समाज में सामाजिक व आर्थिक संबंधों को प्रभावित करने में जाति किस हद तक एक करक थी ?

उत्तर: कृषि समाज में सामाजिक एवं आर्थिक सम्बन्धों को प्रभावित करने में जाति की भूमिका

(i) कृषकों का भिन्न-भिन्न समूहों में विभाजित होना- भारत में जाति-व्यवस्था का आरम्भ वैदिककाल से ही हो गया था। मुगलकाल में भी जाति-व्यवस्था

अपने मूलभूत रूप में विद्यमान थी। इस समय जातीय भेदभाव के कारण कृषक अनेक प्रकार के भिन्न-भिन्न समूहों में विभाजित थे। सर्वप्रथम खेतों की जुताई करने वालों में एक बड़ी संख्या ऐसे व्यक्तियों की थी जो अत्यधिक निम्न समझे जाने वाले कार्यों में संलग्न थे अथवा खेतों में मजदूरी का कार्य किया करते थे। निर्धन व्यक्तियों को निर्धन रहने को मजबूर करने के लिये कुछ जाति के नागरिकों को सिर्फ निम्न कोटि के कार्य ही दिये जाते थे। ग्रामों की जनसंख्या का अधिकांश भाग इसी प्रकार की आबादी का होता था। इस वर्ग के पास संसाधन बहुत कम थे तथा ये जाति-व्यवस्था की पाबन्दियों से पूर्ण रूप से बँधे थे। इनकी स्थिति लगभग वैसी ही थी; जैसा कि आधुनिक भारत में अनुसूचित जाति के व्यक्तियों की है।

(ii) अन्य सम्प्रदायों में भी भेदभाव का फैलना-दूसरे सम्प्रदाय भी इस प्रकार के भेदभावों से अछूते नहीं रहे। मुसलमान समुदायों में हलालखोरान (मैला ढोने का कार्य) जैसे निम्न कोटि के कार्यों से जुड़े समूह गाँव की सीमा से बाहर ही रह सकते थे। इसी प्रकार बिहार प्रान्त में मल्लाहजादों (नाविकों के पुत्र) का जीवन भी दासों जैसा था।

(iii) मध्यवर्ती समूहों में जाति, निर्धनता एवं सामाजिक स्थिति के मध्य सम्बन्ध न होना-यद्यपि समाज के निम्न वर्गों में जाति, निर्धनता एवं सामाजिक स्थिति के बीच भी सम्बन्ध था, परन्तु इस प्रकार का सम्बन्ध मध्यवर्ती समूहों में नहीं था। 17वीं शताब्दी में मारवाड़ में लिखी गई एक पुस्तक में राजपूतों की चर्चा किसानों के रूप में की गयी है। इस पुस्तक के अनुसार जाट भी किसान थे, परन्तु जाति-व्यवस्था में उनका स्थान राजपूतों के समान नहीं था।

(iv) अन्य जातियों की स्थिति 17वीं शताब्दी में उत्तर प्रदेश के वृन्दावन क्षेत्र में निवास करने वाले जमीन की जुताई के काम में लगे गौरव समुदाय के लोगों ने भी राजपूत होने का दावा किया। पशुपालन एवं बागवानी में बढ़ती लाभप्रद स्थिति के कारण अहीर, गुज्जर एवं माली जैसी जातियों के सामाजिक स्तर में

वृद्धि हुई। पूर्वी प्रदेशों में पशुपालन एवं मछुआरी जातियाँ भी किसानों जैसी सामाजिक स्थिति प्राप्त करने लगीं।

प्रश्न 7. सोलहवीं और सत्रहवीं सदी में जंगलवासियों की जिंदगी किस तरह बदल गई?

उत्तर: वाणिज्यिक खेती का असर, जंगलवासियों की जिंदगी पर भी पड़ता था। जंगल के उत्पाद;

जैसे-शहद, मधुमोम और लाक की बहुत माँग थी। लाक जैसी कुछ वस्तुएँ तो सत्रहवीं सदी में भारत से समुद्र पार होने वाले निर्यात की मुख्य वस्तुएँ थीं। हाथी भी पकड़े और बेचे जाते थे। व्यापार के तहत वस्तुओं की अदला-बदली भी होती थी। कुछ कबीले भारत और अफ़गानिस्तान के बीच होने वाले जमीनी व्यापार में लगे थे; जैसे- पंजाब का लोहानी कबीला। इस कबीले के लोग गाँवों और शहरों के बीच होने वाले व्यापार में भी शिरकत करते थे। सामाजिक कारणों से भी जंगलवासियों के जीवन में बदलाव आए। कबीलों के भी सरदार होते थे, कई कबीलों के सरदार जमींदार बन गए, कुछ तो राजा भी हो गए। ऐसे में उन्हें सेना खड़ी करने की ज़रूरत हुई। होंने अपने ही खानदान के लोगों को सेना में भर्ती किया; या फिर अपने ही भाई-बंधुओं से सैन्य सेवा की माँग की।

हालाँकि कबीलाई व्यवस्था से राजतांत्रिक प्रणाली की तरफ़ संक्रमण बहुत पहले ही शुरू हो चुका था, लेकिन ऐसा लगता है कि सोलहवीं सदी में आकर ही यह प्रक्रिया पूरी तरह विकसित हुई। इसकी जानकारी हमें उत्तर-पूर्वी इलाकों में कबीलाई राज्यों के बारे में आइन की बातों से मिलती है। उदाहरण के तौर पर, सोलहवीं-सत्रहवीं सदी में कोच राजाओं ने पड़ोसी कबीलों के साथ एक के बाद एक युद्ध किया और उन पर अपना कब्ज़ा जमा लिया। जंगल के इलाकों में नए सांस्कृतिक प्रभावों के विस्तार की भी शुरुआत हुई। कुछ इतिहासकारों ने तो दरअसल यह भी सुझाया है कि नए बसे इलाकों के खेतिहर समुदायों ने जिस

तरह धीरे-धीरे इस्लाम को अपनाया, उसमें सूफी संतों (पीर) ने एक बड़ी भूमिका अदा की थी।

प्रश्न 8. मुग़ल भारत में जमींदारों की भूमिका की जाँच कीजिये ।

अथवा.

16वीं - 17वीं शताब्दी में मुग़ल भारत में जमींदारों की भूमिका की व्याख्या कीजिये ।

उत्तर: निश्चय ही मुग़लकाल में कृषि सम्बन्धों में जमींदार केन्द्र-बिन्दु थे। निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर हम इसे समझ सकते हैं।

- मुग़लकाल में जमींदारों की आय का मुख्य स्रोत तो कृषि ही थी, किन्तु ये कृषि उत्पादन में प्रत्यक्ष भागीदारी नहीं करते थे। वे अपनी जमीन के मालिक होते थे।
- जमींदार अपनी भूमि को बेच सकते थे, किसी और के नाम कर सकते थे अथवा उसे गिरवी भी रख सकते थे।
- जमींदारों को ग्रामीण समाज में ऊँची स्थिति के कारण कुछ विशेष आर्थिक तथा सामाजिक सुविधाएँ प्राप्त थीं ।
- समाज में जमींदारों की उच्च स्थिति के दो कारण थे; पहला, उनकी जाति तथा दूसरा, उनके द्वारा राज्य को दी जाने
- जमींदारों की शक्ति का एक अन्य स्रोत यह था कि वे राज्य की ओर से कर वसूल सकते थे, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें वित्तीय मुआवजा प्राप्त होता था।
- वस्तुतः जमींदारों की समृद्धि का मुख्य आधार उनकी विस्तृत व्यक्तिगत भूमि थी। उस समय यह मिल्लिकयत अर्थात् - सम्पत्ति कहलाती थी। मिल्लिकयत जमीन पर जमींदारों के निजी प्रयोग के लिये खेती होती थी। प्रायः इन जमीनों पर दिहाड़ी मजदूर काम करते थे।

- यदि मुगलकालीन गाँवों में सामाजिक सम्बन्धों को पिरामिड के रूप में देखें तो जमींदार इसके सँकरे तथा शीर्ष भाग ... थे, अर्थात् जमींदारों का समाज में सबसे ऊँचा स्थान था।
- कर वसूली के अधिकार ने जमींदारों को अत्यधिक शक्तिशाली बना दिया था।
- जमींदारों के पास किले, सेना, घुड़सवार तथा धन अत्यधिक मात्रा में थे।
- मुगलकाल में जमींदारों ने कृषियोग्य जमीनों को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जमींदारों ने कृषकों को कृषि उपकरणों के लिए धन उधार दिया।
- जमींदारी की खरीद-बेच से गाँवों में मौद्रिक गतिशीलता की प्रक्रिया में तीव्रता आई। इसके अतिरिक्त जमींदार अपनी कृषि-पैदावारों को बेच भी सकते थे। हमें ऐसे प्रमाण प्राप्त होते हैं, जिनसे यह ज्ञात होता है कि जमींदार प्रायः बाजार (हाट) लगवाते थे; जहाँ किसान अपनी उपज बेचने आते थे। उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज में जमींदार एक शोषक वर्ग था, किन्तु कृषकों के साथ उनके रिश्ते पैतृकवाद, पारस्परिकता तथा संरक्षण पर आधारित थे। अतः राज्य के विरुद्ध विद्रोह करने में उन्हें कृषकों का भी समर्थन प्राप्त होता था।

प्रश्न 9. पंचायत और गाँव का मुखिया किस तरह से ग्रामीण समाज का नियमन करते थे? विवेचना कीजिए।

अथवा

16वीं - 17वीं सदियों में मुगल ग्रामीण भारतीय समाज में पंचायत की भूमिका की व्याख्या कीजिए।

उत्तर: चोल राज्य के समान मुगलकाल में पंचायतों को एक प्रमुख तथा स्वायत्तशासी स्थान प्राप्त था। इस समय गाँव की पंचायत में बुजुर्गों का महत्वपूर्ण स्थान होता था। साधारणतः वे गाँव के महत्वपूर्ण व्यक्ति हुआ करते

थे। जिन गाँवों में विभिन्न जातियाँ रहती थीं, वहाँ प्रायः पंचायत में भिन्नता अथवा विविधता पाई जाती थी। यह एक ऐसा अल्पतन्त्र था, जिसमें गाँव के पृथक्-पृथक् सम्प्रदायों और जातियों का प्रतिनिधित्व होता था। पंचायत का सरदार एक मुखिया होता था, जिसे मुकद्दम अथवा मण्डल कहते थे। कुछ स्रोतों से ज्ञात होता है कि मुखिया का चयन गाँव के बुजुर्गों की आम सहमति से होता था तथा इस चुनाव के उपरान्त उन्हें इसकी मंजूरी जमींदार से लेनी पड़ती थी।

गाँव के आमदनी व खर्चे का हिसाब-किताब अपनी निगरानी में बनवाना मुखिया का मुख्य कार्य था, जिसमें गाँव का पटवारी उसकी सहायता करता था। पंचायत का खर्चा गाँव के उस आम खजाने से चलता था; जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपना योगदान देता था। इस खजाने से उन कर-अधिकारियों की खातिरदारी का खर्चा भी किया जाता था जो समय-समय पर गाँव का दौरा किया करते थे, वहीं दूसरी ओर इस कोष का प्रयोग प्राकृतिक आपदाओं के समय राहत कार्यों में भी होता था। इसके अतिरिक्त इस धन से कुछ आवश्यक सामुदायिक कार्य भी किए जाते थे।

उपर्युक्त के अतिरिक्त पंचायत का एक मुख्य कार्य यह सुनिश्चित करना था कि गाँव में रहने वाले पृथक्-पृथक् समुदायों के लोग अपनी जाति तथा अपनी सीमाओं में रहें। पूर्वी भारत में सभी विवाह मण्डल की उपस्थिति में होते थे। यँ कहा जा सकता है कि . 'जाति की अवहेलना रोकने के लिये' लोगों के आचरण पर नजर रखना गाँव के मुखिया का उत्तरदायित्व था। पंचायतों को जुर्माना लगाने तथा समुदाय से निष्कासित करने जैसे अधिक गम्भीर दण्ड देने के अधिकार थे। समुदाय से बाहर निकालना एक बड़ा कदम था जो एक सीमित समय के लिए लागू किया जा सकता था, जिसमें दण्डित व्यक्ति को गाँव छोड़ना पड़ता था। इस दौरान वह अपनी जाति तथा व्यवसाय से हाथ धो बैठता था। ग्राम पंचायतों के अतिरिक्त ग्राम में प्रत्येक जाति की अपनी पंचायत भी होती थी।

समाज में ये पंचायतें अत्यधिक शक्तिशाली होती थीं। राजस्थान में जाति पंचायतें पृथक्-पृथक् जातियों के व्यक्तियों के मध्य दीवानी के झगड़ों का निपटारा करती थीं। पश्चिम भारत विशेषतः राजस्थान तथा महाराष्ट्र जैसे प्रान्तों के संकलित दस्तावेजों में ऐसी अनेक अर्जियाँ हैं, जिनमें पंचायत से राज्य के अधिकारियों के खिलाफ जबरन कर उगाही अथवा बेगार वसूली की शिकायत की गयी। सामान्यतः ये अर्जियाँ ग्रामीण समुदाय के सबसे निचले वर्ग के व्यक्ति लगाते थे तथा प्रायः सामूहिक रूप से भी अर्जियाँ दी जाती थीं। . संक्षेप में, मुगलकाल में पंचायतों का स्वरूप तथा उत्तरदायित्व अत्यधिक व्यापक था; जो गाँव में एक छोटी सरकार का प्रतिनिधित्व करती थी।